मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन

(फसल पोषण के मूल तत्व)

मुनीष लहरवान
कुलवीर सिंह
राज कुमार
पंकज कुमार सारस्वत

कृषि विज्ञान केन्द्र
भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
करनाल-132001, हरियाणा

मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन

(फसल पोषण के मूल तत्व)

संकलन एवं संपादन: मुनीष लहरवान
कुलवीर सिंह
राज कुमार
पंकज कुमार सारस्वत

प्रकाशक: निदेशक, डॉ. धीर सिंह
भाकृअनुप- राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा
दूरभाष: 0184-2252800 | फैक्स: 0184-2250042

प्रथम संस्करण: 2024

ISBN : 978-81-970997-3-1

© सर्वाधिकार सुरक्षित

सम्पर्क: कृषि विज्ञान केन्द्र, फोन न. 0184-2259339
ई-मेल : kvkkarnal@gmail.com

मुद्रक: इन्टैक प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स
343, पहली मंजिल, मुगल कॅनाल
करनाल - 132 001 (हरियाणा)
फोन नं. 0184-4043541
ई-मेल: printing.intech@gmail.com

मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन

(फसल पोषण के मूल तत्व)

मुनीष लहरवान
कुलवीर सिंह
राज कुमार
पंकज कुमार सारस्वत

कृषि विज्ञान केन्द्र
भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
करनाल-132001, हरियाणा

1. मृदा परीक्षण: मृदा पोषण का मूल आधार

मृदा परीक्षण क्यों ?

मांटी में पोषक तत्वों की कमी से (जिसका प्रायः किसान को आभास भी नहीं हो पाता है) मिट्टी की उर्वरा शक्ति में धीरे-धीरे गिरावट आने लगती है। अतः मृदा-स्वास्थ्य को टिकाऊ बनाये रखने एवं फसलोत्पादन में बढ़ोत्तरी के लिए मृदा परीक्षण आवश्यक होता है। किसानों के लिए यह आवश्यक है कि वे समय-समय पर अपने खेत की मांटी की जांच कराते रहें। मृदा परीक्षण से कृषक भाईयों को व्यक्तिगत स्तर पर निम्न लाभ प्राप्त होते हैं -

1. मृदा परीक्षण से यह पता चलता है कि खेतों में किन-किन पोषक तत्वों की कितनी मात्रा उपलब्ध है तथा उनमें उगायी जाने वाली फसलों हेतु पोषक तत्वों की कितनी आवश्यकता है जिससे कि उर्वरकों की उचित मात्रा प्रयोग करके अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जा सके।
2. यदि खेत में पोषक तत्वों की मात्रा पर्याप्त अथवा लगभग सामान्य है तो उस स्थिति में खेत में डाले जाने वाले उर्वरकों की मात्रा कम करके अनावश्यक खर्च से बचा जा सकता है।
3. मृदा परीक्षण से प्राप्त परिणामों के आधार पर खेत में डाले जाने वाले उर्वरकों के उपयोग में किसान पूर्ण दक्षता प्राप्त करके अधिकतम लाभ कमा सकते हैं क्योंकि कई बार ऐसा होता है कि किसी खास पोषक तत्व की कमी होने के कारण फसल में प्रयोग किये गये उर्वरक अपना पूरा असर नहीं दिखा पाते हैं उस स्थिति में उर्वरकों पर किया गया खर्च व्यर्थ चला जाता है।

4. मृदा परीक्षण के आधा पर किसान संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग कर सकते हैं तथा आवश्यकता से अधिक प्रयोग होने पर मृदा के रासायनिक व जैविक गुणों में होने वाली विभिन्न हानियों से बच सकते हैं।
5. समस्याग्रस्त मृदाओं (जैसे लवणीय एवं क्षारीय) के बारे में मृदा परीक्षण से सही जानकारी मिलती है जिसके आधार पर उसमें विभिन्न सुधारकों (जैसे अम्लीय मृदाओं के लिए चूना तथा क्षारीय मृदाओं हेतु जिप्सम आदि) का उपयोग करके उस समस्या को दूर किया जा सकता है तथा ऐसी फसलें उगायी जा सकती है जो अम्लीयता, लवणीयता एवं क्षारीयता को सहन कर सकें।
6. विभिन्न फसलों में कई बार किसी विशेष तत्व की कमी से कुछ रोग लग जाते हैं जैसे नत्रजन की कमी से पौधों की वृद्धि एवं कल्लों की संख्या में कमी, फॉस्फोरस की कमी से गन्ने की पत्तियों का संकरी होकर नीली एवं हरी हो जाना, आलू के भीतरी भाग में धब्बे पड़ जाना तथा पोटेशियम की कमी से कपास में पीला सफेद कुर्बण रोग, मैग्नीशियम की कमी से हरिमाहीनता, मैग्नींज की कमी से अनाज की फसलों में ऊत्तक गलन, बोरॉन की कमी से चुकन्दर में आन्तरिक गलन तथा तम्बाकू में शिखर व्याधि रोग आदि। इस प्रकार विभिन्न रोगों का मृदा परीक्षण के आधार पर मिले परिणामों से निदान करते हुए तत्व विशेष की आपूर्ति करके नियंत्रण किया जा सकता है।

मृदा स्वास्थ्य में गिरावट के मुख्य कारण

- रासायनिक उर्वरकों का असंतुलित प्रयोग।
- एक ही प्रकार के उर्वरकों का प्रयोग एवं मृदा से समस्त पोषक तत्वों का दोहन।
- कार्बनिक खादों का अत्यंत कम नहीं के बराबर प्रयोग।
- कम्बाइन तथा हार्वेस्टर से फसलों की कटाई के उपरांत फसलों के अवशेष को जला दिया जाना।
- फसलचक्र में ढेंचा सनई की खेती एवं खाद के प्रयोग पर ध्यान न दिया जाना।
- बायो-फर्टिलाइजर के उपयोग के प्रति जागरूकता की कमी होना।
- खेत की मेड़बंदी न करने से सतह की उपजाऊ मिट्टी बहकर दूर चली जाती है।

मृदा परीक्षण कैसे ?

मृदा परीक्षण हेतु तकनीकी ज्ञान, कुशलता एवं उपकरण आवश्यक होते हैं। किसान इस कार्य को अपने स्तर पर नहीं कर सकते अतः उन्हें मृदा के नमूने प्रयोगशाला में भेजने पड़ते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि मृदा का नमूना जिस खेत से लिया गया है वह उसका वास्तविक रूप से प्रतिनिधित्व करता हो। अतः मृदा नमूना लेते समय बहुत सावधानी रखनी चाहिए। मृदा नमूना निम्न प्रकार लेना चाहिए-

खेत से नमूना लेने के लिए प्रत्येक खेत से लगभग 10-15 नमूने लेकर तथा इन सभी को मिलाकर एक प्रतिनिधि नमूना बना लेते हैं। इसके बाद इनको छाया में सुखा लेते हैं। अब इसके ऊपर एक धन (+) अथवा क्रास (x) का निशान बनाकर इसे चार भागों में बांट लेते हैं तथा इसके आमने-सामने के दो भागों को रखकर शेष दो भागों को अलग कर देते हैं। अब बची हुई मांटी को कागज अथवा पालीथिन शीट पर पुनः फैलाकर उपरोक्त प्रक्रिया दुहारते हैं। इस प्रक्रिया दुहराते हैं। इस प्रक्रिया को तब तक दोहराया जाता है जब तक कि नमूने का वजन 250-500 ग्राम रह जाये। यही खेत की मांटी

का वास्तविक नमूना होता है। प्राप्त किये गये इस वास्तविक नमूने को कपड़े की थैली या पॉलीथीन में रखकर उसके अंदर एवं बाहर लेबल लगा देते हैं तथा लेबल के ऊपर सभी आवश्यक सूचनाएँ जैसे किसान का नाम, खेत की संख्या, बोई गयी एवं बोई जाने वाली फसल आदि लिख देते हैं। उपरोक्त सूचनाओं के साथ मृदा नमूने को परीक्षण हेतु प्रयोगशाला में भेज दिया जाता है।

मृदा का नमूना खुरपी, फावड़े अथवा मांटी खोदने वाले ऑगर (बर्मा) की सहायता से 8 इंच (20 से मी.) की गहराई तक लेना चाहिए तथा मृदा से पौधों के पत्ते, जड़ें, पलवार, कंकड़-पत्थर आदि को अलग कर देना चाहिए अन्यथा मृदा जाँच के परिणाम अशुद्ध हो सकते हैं। मृदा नमूनों के सम्बन्ध में निम्नलिखित सावधानियां कृषकों द्वारा अवश्य बरतनी चाहिए।

1. मृदा नमूनों को उर्वरकों की बोरी के पास अथवा ऊपर कदापि नहीं रखना चाहिए।
2. उर्वरकों से खाली हुए बोरों या छोटी थैलियों में नमूने नहीं रखे जाने चाहिए।
3. खेत में जिस जगह देशी खाद एकत्रित करते हैं वहाँ से नमूने नहीं लेने चाहिए।
4. खेत में बुवाई करने से लगभग एक माह पूर्व नमूना लेना चाहिए तथा नमूनों को ट्रैक्टर की बैटरी के पास कदापि नहीं रखना चाहिए।
5. आसामान्य स्थानों जैसे - पेड़ो की छायादार जगह, दलदली जगह, घास-कूड़े के ढेर आदि के पास से नमूने नहीं लेने चाहिए।

मिट्टी की जाँच कब करें ?

1. फसल बुवाई से कम से कम एक माह पूर्व
2. फसल की कटाई हो जाने अथवा परिपक्व खड़ी फसल में।
3. प्रत्येक तीन वर्ष में फसल मौसम आरम्भ होने से पूर्व एक बार।
4. भूमि में नमी की मात्रा जब कम से कम हो

मृदा परीक्षण में क्या-क्या जांच की जाती है

भूमि परीक्षण में मृदा की अभिक्रिया अर्थात पी.एच. मान (अम्लता/क्षारकता) मृदा में घुलनशील लवणों की मात्रा अर्थात विद्युत चालकता (डेसी साइमन/मीटर), पौधों के लिए उपलब्ध नत्रजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम तथा गंधक की मात्रा का परीक्षण किया जाता है। सिफारिश के अनुसार मृदा में पोषक तत्वों के स्तर की न्यून, मध्यम एवं उच्च मात्रा निम्नलिखित है -

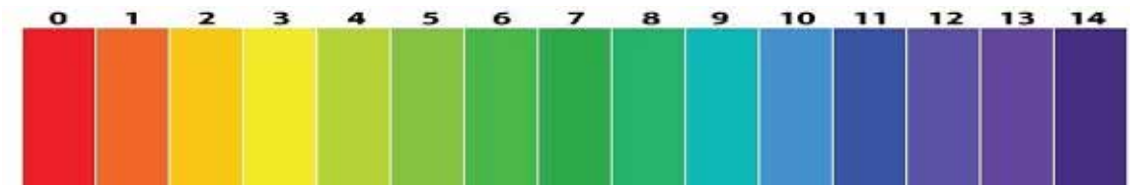

चित्र 1: मृदा पी.एच. मान का पैमाना

तालिका 1: मृदा में विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा का स्तर

क्र. सं.	गुण धर्म	न्यून	मध्यम	उच्च
1.	जैविक कार्बन (प्रतिशत)	0.5 से कम	0.5 से 0.75	0.75 से अधिक
2.	उपलब्ध नाइट्रोजन (कि.ग्रा./हे.)	280 से कम	280 से 560	560 से अधिक
3.	उपलब्ध फास्फोरस (कि.ग्रा./हे.)	10 से कम	10 से 20	20 से अधिक
4.	उपलब्ध पौटेशियम (कि.ग्रा./हे.)	140 से कम	140 से 280	280 से अधिक
5.	उपलब्ध सल्फर (कि.ग्रा./हे.)	10 से कम	10 से 20	20 से अधिक
6.	पी.एच. मान	6.5 से नीचे अम्लीयता का गुण 7.5 से ऊपर लवणीयता एवं क्षारीयता का गुण		

क्र. सं.	गुण धर्म	न्यून	मध्यम	उच्च
7.	विद्युत चालकता: (लवणों की मात्रा) (डेसी साइमन/मीटर)	1.0 से कम सभी फसलों के लिए उपयुक्त 1.0 से 2.0 बीजाकुरण प्रभावित हो सकता है 2.0 से 3.0 लवणता सहनशील फसलें उपयुक्त 3.0 से 4.0 विरले ही फसलोत्पादन 4.0 से अधिक, पूर्ण रूप से लवणीय भूमि		

तालिका 2: मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा का वर्गीकरण एवं सिफारिशें

तत्व का नाम		मृदा में सीमा स्तर (मि.ग्रा./कि.ग्रा.)			सिफारिश कि.ग्रा./एकड़ बेसल (आधारीय)
		निम्न	मध्यम	उच्च	
1.	जिंक	0.6 से कम	0.6-1.2	1.2 से अधिक	10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट
2.	ताँबा	0.5 से कम	0.5-1.2	1.2 से अधिक	2 कि.ग्रा. कॉपर सल्फेट
3.	लोहा	4.5 से कम	4.5-8.0	8.0 से अधिक	10 कि.ग्रा. फैरस सल्फेट
4.	मैग्नीज	2.0 से कम	2.0-4.0	4.0 से अधिक	4 कि.ग्रा. मैग्नीज सल्फेट
5.	सल्फर (गंधक)	10.0 से कम	10.0-12.0	12.0 से अधिक	40 कि.ग्रा. पाइराइट अथवा 20 कि.ग्रा. जिप्सम
6.	बोरॉन	0.25 से कम	0.25-0.50	0.5 से अधिक	2-4 कि.ग्रा. बोरेक्स (सुहागा)
7.	मॉलिब्डेनम	0.02 से कम	0.02-0.05	0.05 से अधिक	200-400 ग्राम

नमूना एकत्रीकरण के समय सावधानियां

» मृदा परीक्षण के लिए सबसे पहले मृदा का नमूना लिया जाता है। इसके लिए जरूरी है कि मृदा का नमूना पूरे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करे। यदि मृदा का नमूना ठीक ढंग से नहीं लिया गया हो और वह मृदा का सही प्रतिनिधित्व न कर रहा हो, तो भले ही मृदा परीक्षण में कितनी ही सावधानियां क्यों न बरती जाएं, उसकी सिफारिश सही नहीं हो सकती। इसलिए खेत की मृदा का नमूना पूरी सावधानी से लेना चाहिए। नमूना लेने के लिए किसान को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसकी खुरपी, फावड़े, लकड़ी या प्लास्टिक की खुरचनी साफ हो।

» उस स्थान से नमूना न लें, जहां पर खाद, उर्वरक, मेड़ों, पेड़ों, रास्तों के पास आदि को इकट्ठा किया गया हो।

» जहां तक सम्भव हो गीली मृदा का नमूना न लें। अन्यथा मृदा उसे छाया में सुखाकर ही प्रयोगशाला को भेजें।

» नमूना लेने से पूर्व खेत की सिंचाई न करें।

» ऐसे क्षेत्र जहां अधिकतर समय पानी भरा रहता हो, वहां से नमूने एकत्र न करें।

» मृदा अपरदन के कारण जिस क्षेत्र की ऊपरी सतह कटकर बह गई हो, तो उसके नमूने अलग से लेने चाहिए।

» यदि सघन कृषि की जा रही हो, तो नमूने एक फसलचक्र के पूरा होने पर प्रतिवर्ष लेने चाहिए।

» यदि खेत अधिक ढालू है, तो नमूने कई स्थानों से लेने चाहिए।

» मृदा का नमूना बुआई से लगभग एक माह पूर्व कृषि विकास प्रयोगशाला में भेज दें, जिससे समय पर मृदा की जांच रिपोर्ट मिल जाए एवं उसके अनुसार उर्वरक एवं सुधारकों का उपयोग किया जा सके।

» यदि खड़ी फसल में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई दें और मृदा का नमूना लेना हो, तो फसल की पंक्तियों के बीच से नमूना लेना चाहिए।

» मृदा के नमूने के साथ सूचना पत्र अवश्य डालें, जिस पर साफ अक्षरों में नमूना संबंधित सूचना एवं किसान का पूरा पता लिखा हो।

» यदि नमूना लेने वाला क्षेत्र बड़ा है, तो नमूनों की संख्या उसी के अनुरूप बढ़ा देनी चाहिए।

» साफ औजारों (जंग रहित) तथा साफ थैलियों का उपयोग करें।

2. फसल पोषण एवं उर्वरक प्रबंधन

पौधे जड़ों द्वारा भूमि से पानी एवं पोषक तत्व, वायु से कार्बनडाई ऑक्साइड तथा सूर्य से प्रकाश ऊर्जा लेकर अपने विभिन्न भागों का निर्माण करते हैं। पोषक तत्वों को पौधों की आवश्यकतानुसार निम्न प्रकार वर्गीकृत किया गया है:

1. संरचनात्मक तत्व - कार्बन, हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन
2. मुख्य पोषक तत्व - नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पौटेशियम
3. गौण पोषक तत्व - कैल्शियम, मैग्नीशियम एवं गंधक (सल्फर)
4. सूक्ष्म पोषक तत्व - लोहा, जस्ता, कॉपर, मैंग्नीज, मॉलिब्डेनम बोरॉन क्लोरीन एवं निकिल

पौधों में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण

यदि मृदा में पोषक तत्व आवश्यक मात्रा में नहीं होते हैं तो पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है। कभी-कभी ये लक्षण आखों से दिखाई नहीं पड़ते हैं किन्तु पौधों की वृद्धि पर असर पड़ता है इसे पौधों की प्रछन्न (छिपी हुई) भूख कहते हैं। किन्तु जब तत्वों का स्तर मृदा में एक सीमा से कम हो जाता है तो पौधों में विशिष्ट कमी स्पष्ट होने लगती है। कमी के लक्षण यद्यपि विभिन्न फसलों में अलग-अलग होते हैं किन्तु इनका सामान्य रूप एक ही प्रकार का होता है। पौधों में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी के लक्षणों को पहचानने के आधार हैं: 1. पत्तियों में कमी का स्थान 2. पत्तियों में मृतक धब्बों की उपस्थिति 3 पूरी पत्ती या नसों के बीच का पीलापन। कमी के लक्षणों को पौधों की पत्तियों में निम्नप्रकार बांटा गया है।

पौधों की पत्तियों में पोषक तत्वों की कमी का स्थान तत्वों की गतिशीलता पर निर्भर करता है। नत्रजन, फास्फोरस, पौटेशियम, मैग्नीशियम, मॉलिब्डेनम की कमी के लक्षण निचली पत्तियों पर आते हैं क्योंकि ये तत्व पौधे में गतिशील होने के कारण ऊपर चले जाते हैं। जिससे निचली पत्तियों में कमी के लक्षण आने लगते हैं। जिंक मध्यम गतिवाला तत्व है इसलिए इसके लक्षण बीच की पत्तियों में आते हैं। जो तत्व पौधों में कम गति वाले होते हैं जैसे - सल्फर, कॉपर, आयरन (लोहा), मैंगनीज की कमी के लक्षण नई पत्तियों पर आते हैं। कैल्शियम एवं बोरॉन पौधों में गतिशील नहीं होते हैं अतः इनकी वृद्धि शीर्ष कलिकाओं पर आती है। क्लोरीन की कमी आम तौर पर पौधों में नहीं पाई जाती है।

पुरानी पत्तियों पर पोषक तत्वों की कमी के लक्षण: इनकी पहचान पुरानी पत्तियों में मृत धब्बों की उपस्थिति और अनुपस्थिति के आधार पर की जाती है।

मृत धब्बों की उपस्थिति: पोटेशियम की कमी में पत्तियों के शीर्ष से पीलापन शुरू होता है और आधार तक फैल जाता है। बाद में पीले भाग के ऊतक मर जाते हैं तथा मृत धब्बों में बदल जाते हैं। मृत धब्बे पत्तियों के किनारे अथवा शीर्ष पर अधिक होते हैं।

मॉलिब्डेनम की कमी में अनिश्चित आकार के अल्प पारदर्शी धब्बे बनते हैं जो कि पत्तियों की शिराओं के बीच स्थित होते हैं। ये धब्बे हल्के हरे रंग, पीले अथवा भूरे हो सकते हैं। इन पत्तियों के निचले भाग से लाल भूरे धब्बे बनने पर रेजिन या गोंद पदार्थ निकलते हैं जो धब्बों पर फैले दिखाई देते हैं।

मृत धब्बों की अनुपस्थिति: नत्रजन की कमी में पूरी पत्ती तथा उसकी नसें पीली पड़ जाती है। धान्य फसलों में विशेषकर पत्तियाँ खड़ी और कड़ी हो जाती है। दलहनी फसलों में पत्तियाँ आसानी से झड़ जाती है। धान्य फसलों में निचली पत्तियों के ऊपरी शिरे पर वी (ट) आकार का पीलापन फैलता है। फास्फोरस की कमी में पत्तियाँ छोटी खड़ी और असाधारण रूप से गहरी हरी या हरी लाल हो जाती है। इनमें हरा-भूरा अथवा पीला रंग आ जाता है तथा पिछली सतह पर कॉस्य रंग आ जाता है। मैग्नीशियम की कमी से भी पीलापन आता है किन्तु नत्रजन की कमी से भिन्न होता है। पीलापन शिराओं के बीच में होता है और शिरायें (नसें) हरी बनी रहती है। इसमें पत्तियाँ खड़ी नहीं होती हैं बल्कि बहुत आसानी से टूटकर अलग हो जाती हैं। अत्यधिक कमी की अवस्था में पत्तियाँ के किनारे सड़ने लगते हैं।

नई पत्तियों पर कमी के लक्षण: ये लक्षण पूरी पत्तियों पर आते हैं अथवा शिरायें हरी रह सकती है।

जब पत्तियों की शिरायें हरी हों: लोहा और मैंगनीज की कमी में पत्तियों की शिरायें हरी रहती हैं, बाकी पत्ती पीली पड़ जाती है तथा कुछ हल्की सफेदी भी आती है। अत्यधिक कमी की स्थिति में पत्ती का अधिकांश भाग सफेद पड़ जाता है। इसी प्रकार मैंगनीज की कमी में भी शिरायें हरी रहती है तथा बाकी पत्ती पीली हो जाती है लेकिन सफेदी नहीं आती है। बाद की अवस्था में मृत धब्बे भी बन जाते हैं। पत्तियाँ चित्तीदार दिखती हैं।

जब पत्तियों की शिरायें हरी न हों: सल्फर की कमी के कारण पत्ती पीली हो जाती है तथा शिरायें बाकी पत्ती से कुछ अधिक पीली हो जाती हैं। पत्तियों में मृत धब्बे नहीं बनते हैं। कॉपर की कमी में पत्तियाँ पीली से सफेदी के रंग में दिखती हैं। अधिक कमी से शिराओं में सड़न आ जाती है और पत्तियों की चमक खत्म हो जाती है। पत्तियाँ शिथिल होकर सूख जाती हैं तथा हल्के झटके में आसानी से अलग हो जाती हैं।

शीर्ष कलिका में कमी के लक्षण: कैल्शियम और बोरॉन की कमी अधिकतर शीर्ष कलिकाओं में आती है। कैल्शियम की कमी में कलियों की पत्तियाँ पीली होकर सूखने लगती हैं और उनमें आंशिक सफेदी आ जाती है लेकिन पत्ती का आधार हरा रहता है। कलियों का एक तिहाई भाग नीचे झुक जाता है और आसानी से टूट जाता है। अत्यधिक कमी में कलियाँ मर जाती हैं।

बोरॉन की कमी से पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं तथा शिखर बहुत लम्बा हो जाता है।

पुरानी और नई पत्तियों में कमी के लक्षण: जिंक की कमी पुरानी तथा नई दोनों पत्तियों पर आती है। इसमें पत्तियों की शिरायें हरी बनी रहती है। जिंक की कमी में मृत धब्बे पत्तियों की सतह शिराओं और किनारों तक फैल जाते हैं। धान्य फसलों में ऊपर से 2-4 पत्तियों में वानस्पतिक अवस्था के दौरान जिंक की कमी आरम्भ होती है। पौधे में तने की गाठों के बीच की दूरी कम हो जाती है तथा पौधे झाड़ीदार हो जाते हैं जिससे पौधों में पेनीकल का विकास रूक जाता है।

मृदा में स्वास्थ्य जीवन के लिए जीवांश कार्बन का महत्व

मृदा जीवांश, कार्बन, पौधों, पशुओं, सूक्ष्मजीवों, पत्तियों एवं लकड़ी से बनता है। इसकी मात्रा तापमान, वर्षा, वनस्पति, मृदा प्रबंधन तथा भूमि के उपयोग में परिवर्तन आदि कारणों से कम-ज्यादा हो सकती है। यह मिट्टी में तीन फीट गहराई तक पाया जाता है। आज के जलवायु परिवर्तन के युग में मिट्टी ऐसा प्राकृतिक संसाधन है, जिस पर सबसे बड़ा खतरा मंडरा रहा है। मिट्टी, कार्बन का सबसे बड़ा भण्डार है। इसमें जितना कार्बन है उतना वायुमंडल और धरती पर पाई जाने वाली वनस्पतियों को मिला देने पर भी नहीं होता।

फसल जड़ क्षेत्र में मृदा जीवांश कार्बन का स्तर 0.75 प्रतिशत या इससे अधिक होना चाहिए तभी मृदा अधिक स्वस्थ व उर्वर हो सकती है। जीवांश कार्बन का स्तर 0.5 से 0.75 प्रतिशत के मध्य होने पर मृदा मध्यम उर्वर व 0.5 प्रतिशत से कम होने पर कम उर्वर होती है। वांछित जीवांश कार्बन स्तर मृदा में होने पर ही सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ती है तथा तत्वों का खनिजीकरण अधिक होता है। इसके परिणामस्वरूप मृदा में पोषक तत्वों की घुलनशीलता बढ़ने के फलस्वरूप पौधों में इनकी उपलब्धता बढ़ जाती है। जलवायु परिवर्तन से मृदा जीवांश कार्बन के भंडार का क्षरण हो सकता है।

मृदा जीवांश पदार्थ के कार्य

जीवांश पदार्थ, मृदा के प्रमुख अवयव हैं, जो विभिन्न प्रकार की जैविक प्रक्रियाओं के लिए उत्तरदायी हैं। मृदा जीवांश पदार्थ की उपस्थिति में लाभकारी जीवाणु अधिक सक्रिय रहते हैं। ये मृदा पी-एच को नियंत्रित करने में भी मदद करते हैं। मृदा में पाए जाने वाले विभिन्न लाभकारी जीवाणुओं की क्रियाशीलता पर मृदा पी-एच का सीधा प्रभाव पड़ता है। पौधों के लिए मुख्य पोषक तत्व नाइट्रोजन की उपलब्धता मृदा जीवाणुओं की सक्रियता पर निर्भर करती है। इस प्रकार मृदा जीवांश पदार्थ फसलों की पोषकता में अपना योगदान देते हैं। इसके साथ ही इनका महत्व अन्य कार्यों के लिए भी है

- » मृदा की संरचना का निर्धारण
- » आर्द्रता की मात्रा का निर्धारण
- » प्रदूषक पदार्थों का क्षरण
- » ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन
- » मृदा बफरिंग

कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात

सघन फसल प्रणाली के अंतर्गत कार्बन-नाइट्रोजन का अनुपात असंतुलित हो रहा है। इसके परिणामस्वरूप मृदा की उत्पादन क्षमता में काफी गिरावट होती जा रही है। अत्यधिक नाइट्रोजन और फॉस्फोरस उर्वरकों के प्रयोग करने पर भी हमारे फसलोत्पादन में वृद्धि नहीं हो पा रही है। इसका स्पष्ट कारण मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों का अत्यधिक दोहन, सघन फसल प्रणाली व जीवांश तथा पोषक तत्वों की कमी है।

मृदा में जीवांश पदार्थों की कमी के प्रभाव

मृदा में जीवांश पदार्थों की कमी से उसमें उपस्थित लाभकारी जीवाणु और जीव-जंतु विलुप्त हो जाते हैं। इनकी उपस्थिति में मृदा में होने वाली विभिन्न अपघटन क्रियाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इससे पोषक तत्वों एवं खनिज लवणों का बहुत बड़ा हिस्सा पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाता। कृषि में कार्बनिक खाद बहुत कम मात्रा में प्रयोग की जा रही है। इसके परिणामस्वरूप मृदा में जीवांश पदार्थ की कमी होती जा रही है। मृदा में जीवांश पदार्थ की कमी से उसमें उपस्थित लाभकारी जीवाणु और सूक्ष्मजीव विलुप्त हो रहे हैं। इनकी उपस्थिति में मृदा में होने वाली विभिन्न अपघटन क्रियाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने से पोषक तत्वों एवं खनिज लवणों का बहुत बड़ा भाग पौधों को प्राप्त नहीं हो पाता है।

मृदा जीवांश कार्बन का प्रबंधन

- » जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव को रोकने के लिए मृदा जीवांश कार्बन का प्रबंधन जरूरी है। इसके लिए जलवायु परिवर्तन की विभिन्न प्रबंधन रणनीतियों, व्यवहारगत परिवर्तनों एवं विभिन्न तकनीकों को प्रयोग में लाया जा सकता है। इसके लिए निम्नांकित उपाय करने चाहिए
- » कृषि वानिकी को बढ़ावा देना फसलचक्र अपनाना
- » फसल में पलवार का प्रयोग (जैविक खेती)
- » रासायनिक खाद के साथ-साथ पारम्परिक खाद का भी प्रयोग करना
- » स्थानीय पारिस्थितिकी में बदलाव या ह्रास से बचना
- » खेत में जल के रुकाव की व्यवस्था करना
- » खराब हो गई और बेकार पड़ी भूमि में वृक्ष लगाना
- » ऐसी फसलें लगाना, जिनसे उत्पादन के साथ अधिक पत्ते, पराली आदि प्राप्त हों
- » सूखी भूमि की सिंचाई की तकनीक को अपनाना

3. मृदा में जीवन एवं जैव उर्वरक

मृदा स्वास्थ्य एवं फसल उत्पादन में जैव उर्वरकों की भूमिका: जैव उर्वरक सूक्ष्म जीवाणुओं के टीके होतें हैं, जिनके प्रयोग से फसल उत्पादन में वृद्धि होती हैं। जैव उर्वरकों में सूक्ष्म जीवाणुओं के शक्तिशाली विभेद (स्ट्रेन्स) होते हैं जो वायुमण्डलीय नत्रजन को स्थिरीकरण द्वारा, मृदा फास्फेट को घुलनशील बनाकर एवं कार्बनिक पदार्थों को अपघटित करके पौधों को नत्रजन, फास्फोरस एवं अन्य महत्वपूर्ण पोषक तत्व उपलब्ध कराने में सक्षम होते हैं। तथा इसके साथ-साथ माइकोराइजा (फंजाई) एवं पादप वृद्धिकारक सूक्ष्म जीवों को कल्चर द्वारा जैव उर्वरकों के रूप में मृदा में प्रयोग किया जाता है। आधुनिक खेती में जैव उर्वरकों का प्रयोग लगातार बढ़ता जा रहा है। पोषक तत्वों के आधार पर सूक्ष्म जैव उर्वरकों का वर्गीकरण निम्न प्रकार है:

मृदा मे जैविक उर्वरकों का प्रयोग

जो सूक्ष्म जीवाणु (बैक्टीरिया) दलहनी फसलों की जड़ों की गाठों में सहजीवन व्यतीत करते हुये वायुमण्डलीय नत्रजन का स्थिरीकरण करते हैं, उन्हें सहजीवी सूक्ष्मजीव कहते हैं।

जो जीवाणु धान्य फसलों के जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से जीवन यापन करते हुए वायुमण्डलीय नत्रजन का स्थिरीकरण करते हैं, उन्हें असहजीवी सूक्ष्मजीव कहते हैं। फसलों में जब जैविक उर्वरकों का टीका लगाया जाता है, तो नत्रजन का यौगिकीकरण करते हैं। दलहनी फसलों में जो राइजोबियम जीवाणु पौधों के सहयोग से नत्रजन स्थिरीकरण एवं यौगिकीकरण करते हैं, उन्हें सहजीवी संघटक कहते हैं। राइजोबियम के अतिरिक्त अन्य जीवाणु भी मृदा में नाइट्रोजन का यौगिकी करण करते हैं।

नत्रजन यौगिकीकरण करने वाले महत्वपूर्ण जीवाणु

1. **सहजीवी रूप से जीवन यापन करने वाले अणुजीव(जीवाणु):** सहजीवी रूप में नत्रजन का यौगिकीकरण केवल राइजोबियम जीवाणुओं द्वारा होता हैं। इसका विवरण निम्न प्रकार है -

राइजोबियम: जैविक उर्वरको में राइजोबियम नत्रजन यौगिकीकरण करने वाला एक महत्वपूर्ण जीवाणु है। यह दलहनी पौधों की जड़ ग्रन्थियों में रहकर सहजीवी जीवन यापन करते हुए पौधों को नत्रजन प्रदान करता है। राइजोबियम की अनेक प्रभावकारी और उन्नतशील प्रजातियाँ विकसित की गई है। ये जीवाणु उदासीन अथवा क्षारीय मृदा में दलहनी पौधों की जड़ों के पास रहते है और उपयुक्त परिस्थितियाँ मिलने पर पौधों की जड़ों के मूल रोमों द्वारा जड़ों की कार्टेक्स (जड़ के भीतर) में पहुच कर प्रजनन करते हैं, साथ ही कार्टेक्स की कोशिकाओं का विभाजन होता है जिसके फलस्वरूप जड़ों में गाठों का निर्माण होता है। राइजोबियम के जीवाणुओं का जड़ों में प्रवेश होने से उनका आकार बदल कर गोल हो जाता है, जिसकी उपस्थिति में नत्रजन का यौगिकीकरण होता है। ये जीवाणु गाठों में रहकर पौधों की कोशिकाओं से शर्करा (कार्बोहाईड्रेट) भोजन के रूप में उपयोग करते हैं और वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को अमोनिया (NH_3) के रूप में परिवर्तित कर देते हैं, जो बाद में जैव रसायनिक प्रक्रिया द्वारा नाइट्रेट (NO_3-) के रूप में परिवर्तित होकर पौधों में पोषक तत्वों के रूप में काम आती हैं। जड़ के भीतर कार्टेक्स में एक लाल रंग का पदार्थ बनता है, जिसे लेग हीमोग्लोबिन कहते है। बैक्टीरॉइड के अन्दर नाइट्रोजिनेज एन्जाइम लेग हीमोग्लोबिन के साथ नत्रजन का स्थिरीकरण करता है। जड़ों की बड़ी और गुलाबी रंग की ग्रथिंया नत्रजन स्थिरीकरण की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण होती हैं। जड़ों में अच्छी ग्रन्थियाँ बनने एवं नत्रजन स्थिरीकरण के लिए मृदा में राइजोबियम जीवाणुओं की पर्याप्त संख्या होनी चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक हैं कि सभी दलहनी फसलों के बीजों को उपर्युक्त प्रजाति से उपचारित करके ही बोया जाये। क्योंकि एक ही प्रकार के राइजोबियम जीवाणु सभी दलहनी फसलों में ग्रन्थि निर्माण नहीं कर सकते हैं। राइजोबियम जीवाणु के प्रयोग से मृदा के भौतिक एवं जैविक गुणों में भी सुधार होता हैं, जिससे मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता में वृद्धि होती हैं।

2. **असहजीवी एवं स्वतंत्र रूप से जीवनयापन करने वाले अणुजीव:** स्वतंत्र रूप से जीवन यापन करने वाले अणु जीवों द्वारा मृदा में वायुमण्डलीय नत्रजन यौगिकीकरण (स्थिरीकरण) की प्रक्रिया को असहजीवी नत्रजन यौगिकीकरण कहते हैं। इस वर्ग में निम्न जैव उर्वरक आते हैं -

1) **वायुजीवी:** ये सूक्ष्मजीव मृदा में ऑक्सीजन की उपस्थिति में कार्य करते हैं। जैसे- एजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिलम, एजोमोनास, माइकोबैक्टीरियम आदि।

2) **अवायुजीवी:** ये सूक्ष्मजीव मृदा में ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में कार्य करते हैं। जैसे- क्लोरोबियम, क्लास्ट्रीडियम, क्रोमेटियम आदि।

3) **वायु-अवायुजीवी:** ये जीवाणु वायु तथा अवायुवीय दोनों परिस्थितियों में नत्रजन स्थिरीकरण का कार्य करते हैं। जैसे- बेसीलस, एन्टीरोबेक्टर, एस्छीरीशिया, क्लेबसिला तथा रोडोस्पाइरिलम। असहजीवी वर्ग के प्रमुख जीवाणुओं द्वारा नत्रजन स्थिरीकरण का विवरण इस प्रकार है -

एजोटोबैक्टर: यह खेती में योगदान के लिए सबसे महत्वपूर्ण एवं सर्वाधिक प्रचलित जीवाणु है। यह स्वतंत्र रूप से जीवन यापन करते हुये वायुमण्डलीय नत्रजन का यौगिकीकरण करता है। इसकी प्रमुख प्रजातियाँ- एजोटोबैक्अर क्रूकोकम, एजोटोबैक्टर एजीलिस, एजोटोबैक्टर, वाइनीलैन्डी एवं एजोटोबैक्टर बिजरिंकी हैं। इनमें से कुछ प्रजातियाँ मृदा में पायी जाती हैं। एजोटोबेक्टर क्रूकोकम अपने देश की क्षारीय एवं उदासीन मृदाओं में प्रमुखता से पाई जाते

हैं। ये जीवाणु भूमि एवं जड़ सतह (राइजोस्फीयर) पर स्वतंत्र रूप से रहकर ऑक्सीजन की उपस्थिति में वायुमण्डलीय नत्रजन का स्थिरीकरण करते हैं। ये जीवाणु पौधों की जड़ों से स्रावित पदार्थों जैसे शर्करा, अमीनों अम्ल, कार्बनिक अम्ल एवं विटामिन को ऊर्जा के स्रोत्र के रूप में उपयोग करते हैं। एजोटोबैक्टर जीवाणु किसी भी गैर दलहनी फसल में जैव उर्वरक के रूप में प्रयोग किया जा सकता हैं। इनके लाभदायक प्रभाव गेंहूँ, जौ, कपास, ज्वार, बाजरा आदि में देखे जा सकते हैं। एजोटोबैक्टर के सक्रिय जीवाणु कल्चर के प्रयोग से शाक सब्जियों की फसलों में 15-20 प्रतिशत एवं धान्य फसलों में 10-15 प्रतिशत तक उपज में वृद्धि होती है। इन जीवाणुओं द्वारा वायुमण्डलीय नत्रजन का स्थिरीकरण स्वतंत्र अवस्था में 20-30 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर और सहजीवी अवस्था में 10-15 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर तक होता हैं। एजोटोबैक्टर के प्रयोग से फसलों में अंकुरण (धान 72.85%) (कपास 35.50%), (गेहूँ 50%) अधिक होता है। एजोटोबैक्टर के प्रयोग से आलू में स्टार्च, चुकन्दर में शर्करा, सूरजमुखी में तेल एवं मक्का में प्रोटीन की मात्रा बढ़ जाती है। ये जीवाणु मृदा में कुछ वृद्धि कारक पदार्थ (जैसे - आक्जिन, इण्डोलएसीटिक अम्ल, जिब्रेलिन), विटामिन (थायमिन, राइबोफ्लेविन, पायरीडॉक्सिन, सायनोकोब्लामिन, निकोटिनिक अम्ल, पेन्टोथैनिक अम्ल) और कुछ फंफूदनाशक पदार्थ (आल्टरनेरिया फ्यूजेरियम) का स्राव भी करते हैं। एजोटोबैक्टर के प्रयोग से मृदा के भौतिक गुणों में सुधार होता हैं।

एजोस्पाइरिलम: फसलों में इस जीवाणु का प्रयोग जैव उर्वरक के रूप में हाल ही में प्रारम्भ हुआ है। यह जीवाणु घास (ग्रेमिनी) परिवार की फसलों के पौधों की जड़ों के ऊपर या अन्दर उगता हैं तथा वहीं पर नत्रजन का यौगिकीकरण करता हैं। जौ, जई एवं मोटे अनाज वाली फसलों (जिनमें नत्रजन उर्वरकों का प्रयोग कम मात्रा में होता हैं) में इन जीवाणुओं का विशेष महत्व हैं। एजोस्पाइरिलम बैसीलस जीवाणु द्वारा नत्रजन के अधिकतम स्थिरीकरण हेतु उपयुक्त तापमान 30-35^{0}C होता है। प्रक्षेत्र अनुसंधान के परिणाम बताते हैं कि इसके प्रयोग से जई में 36-54, ज्वार में 15-60, जौ में 18-26, गेहूँ में 3-22, तथा धान में 1-76 प्रतिशत तक उपज में वृद्धि होती है।

एसीटोबैक्टर: एसीटोबैक्टर जीवाणु अत्यधिक अम्लीय परिस्थितियों में भी क्रियाशील रहता हैं। गन्ने की फसल में इसके प्रयोग से 50-100 किलो नत्रजन प्रतिहेक्टर प्राप्त होती हैं तथा उत्पादन लगभग 20 प्रतिशत अधिक मिलता है।

नीलहरित शैवाल: इसको ब्लूग्रीन एल्गी भी कहते हैं। धान के खेतों में जहाँ पानी भरा रहता है, वहाँ नीलहरित शैवाल पाया जाता है। यह धान के उत्पादन में वृद्धि करता है तथा नत्रजन स्थिरीकरण के अतिरिक्त यह विटामिन और वृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले पदार्थों का स्राव करता है जो कि धान के पौधों की वृद्धि के लिए लाभदायक होते हैं। नीलहरित शैवाल भूमि में स्वतंत्र रूप से रहने वाले जीवाणु हैं जो कि प्रकाश, जल, कार्बनडाइऑक्साइड, नत्रजन, और खनिज युक्त लवणों की उपस्थिति में अपना भोजन बनाते हैं तथा फसल में 10-40 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर नत्रजन का यौगिकीकरण करते हैं। नीलहरित शैवाल की ओलोसिस, एनाविना, केलोथ्रिक्स, स्पाइरोगाइरा, एनाविनायसिस, वैम्पाइलोंनिमा, सिलिण्डियोंस्पम आदि प्रजातियाँ जलाक्रान्त दशाओं के लिए उपयुक्त होती हैं।

नीलहरित शैवाल तैयार करनें की विधि: शैवाल तैयार करने हेतु लोहे की चादर अथवा ईंट-गारे की एक ट्रे बना लेतेहैं तथा इसमें 5-6 कि.ग्रा. मिट्टी भरकर सुपर फास्फेट तथा 2 ग्राम सोडियम मॉलिब्डेट अच्छी तरह से मिलाते हैं तथा ट्रे में पानी भरकर कल्चर मिलाकर रख देते हैं। 10-15 दिनों में पानी की सतह पर शैवाल की मोटी परत बनाकर तैयार हो जाती हैं। पानी सूखने पर शैवाल की पपड़ियों को एकत्रित करके थैलों में भर लेते हैं तथा ट्रे में पुनः पानी भर कर शैवाल के कल्चर को मिला देने पर शैवाल की परत तैयार हो जाती हैं। इस तरह शैवाल को पूरे वर्ष उगाया जा सकता हैं। धान की रोपाई के एक सप्ताह बाद स्थिर पानी में 12-15 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर की दर से शैवाल कल्चर डालने पर 4-5 दिनों तक पानी को खेत में स्थिर रखना चाहिए। नीलहरित शैवाल के प्रयोग से धान की पैदावार में 40-50 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर तक वृद्धि होती है।

अजोला: यह एक तैरने वाला जलीय फर्न है जो कि नीलहरित शैवाल के सह सम्बध में पत्तियों की सतह के छेदों में रह कर नत्रजन का यौगिकीकरण करता है। सूर्य की ऊर्जा प्रयोग करके अजोला नत्रजन यौगिकीकरण द्वारा काफी मात्रा में (37 टन/हे./वर्ष) जैव पदार्थ पैदा करता है। धान की फसल में डालने पर इसका विकास बहुत तेजी से होता है और 10-20 दिन के अन्दर एक हैक्टर में 8-15 टन हरा पदार्थ प्राप्त हो जाता हैं, जिससे लगभग 870 किग्रा. नत्रजन प्राप्त होती है। हरे पदार्थ में 0.2-0.3 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा शुष्क पदार्थ में 4-5 प्रतिशत नाइट्रोजन पाई जाती हैं। अजोला के हरे पदार्थ में 94 प्रतिशत जल होता है। नाइट्रोजन के अतिरिक्त शुष्क पदार्थ में 0.5-1.0 प्रतिशत मैग्निशियम, 0.11-0.16 प्रतिशत मैंगनीज और 0.26 प्रतिशत लोहा (आयरन) पाया जाता हैं। मिट्टी में अजोला के हरे पदार्थ के विघटन से अधिकांश नाइट्रोजन धान की फसल को प्राप्त हो जाती है। पानी की उचित व्यवस्था होने पर अजोला का प्रयोग हरी खाद की तरह किया जा सकता है। खेत में 5-10 से.मी. पानी भर कर तथा 4-8 किग्रा. प्रति हेक्टर की दर से फॉस्फेट का प्रयोग करना आवश्यक होता है। खेत में अजोला की बुआई धान की रोपाई से एक महीने पहले कर देते हैं। कीड़े-मकोड़ों के प्रकोप से बचाव के लिए 3-15 ग्राम कार्बोफ्युरान मिलाना आवश्यक होता है। लगभग 20 दिन में सम्पूर्ण खेत अजोला से भर जाता हैं, जिसे पलट कर मिट्टी में मिला दिया जाता हैं और धान की रोपाई कर देते हैं।

फास्फोरस परिवर्तनीय जैव उर्वरक: फास्फेट जैव उर्वरक मृदा में दो प्रकार के कार्य करते हैं

(1) मृदा में उपस्थित अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बनाना तथा (2) मृदा फास्फेट को अवशोषित करके पौधों को उपलब्ध कराना।

(1) **मृदा फास्फेट विलायक जैव उर्वरक:** फास्फोरस पौधों के लिए नत्रजन के बाद दूसरा मुख्य पोषक तत्व हैं। मृदा में डाले गये कुल फॉस्फोरस की लगभग 20-25 प्रतिशत मात्रा ही पौधों को उपलब्ध हो पाती हैं, क्योंकि फॉस्फेट आयन्स अत्यधिक क्रियाशील होने के कारण मृदा में

लोहा (आयरन), कैल्सियम, जिंक आदि से क्रिया करके अविलेय अवस्था में परिवर्तित हो जाते हैं। मृदा में पाये जाने वाले कुछ जीवाणुओं में अघुलनशील फॉस्फोरस को घोलने की क्षमता होती है। प्रमुख फास्फेट विलायक सूक्ष्म जीवाणु दो प्रकार के होते हैं- (1) बैक्टीरिया जैसे स्यूडोमोनासस्ट्रेटा, *बेसीलस पॉलीमिक्सा, बेसीलस मेगाथीरियम* आदि। (2) फंजाई जैसे *एस्परजिलस अवामोरी, एस्परजिलस नाइजर* आदि सूक्ष्म जीव रॉकफास्फेट के साथ मृदा में स्थिर फास्फोरस को घुलनशील अवस्था में बदल देते हैं, जबकि बेसीलस मेगाथीरियम जीवाणु स्थिर फास्फोरस के साथ-साथ कार्बनिक फास्फोरस को भी घुलनशील अवस्था में बदल देते हैं। फास्फोरस विलायक जीवाणु ज्यादातर विषम पोषित (हेट्रोट्राफ) होते हैं, जो जैव पदार्थों का विघटन करते हैं। इस दौरान कुछ कार्बनिक अम्लों (जैसे मेलिक अम्ल, ग्लाईआक्जैलिक अम्ल, सक्सीनिक अम्ल, साइट्रिक अम्ल, फ्यूमेरिक अम्ल, टार्टारिक अम्ल एवं अल्फाकीटो म्लूटेरिक अम्ल आदि) का निर्माण होता हैं, जो ट्राईकैल्शिम फास्फेट (क्षारीय मृदा में) एवं आयरन या एल्युमिनियम फास्फेट (अम्लीय मृदा में) को विलेय करते हैं। फास्फेट जीवाणु खाद्यान फसलों की जड़ों में स्थिर और अप्राप्य फास्फोरस को विलेय करके प्राप्य फास्फोरस में बदलकर फसलों की जड़ों में फास्फोरस की उपलब्धता में वृद्धि करते हैं। ये जीवाणु रॉकफास्फेट में कुल अविलेय फास्फोरस (जो क्षारीय मृदा में अविलेय होता हैं) को घुलनशील बनाते है, जिससे फास्फोरस उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है तथा जड़े मजबूत और गुच्छेदार बनती हैं। इससे नत्रजन स्थिरीकरण में वृद्धि होती हैं। फास्फेट विलायक जीवाणुओं के कल्चर को राइजोबियम कल्चर के साथ प्रयोग करने से पैदावार में 10-30 प्रतिशत तक की वृद्धि होती हैं। यह सभी फसलों में बुवाई के समय प्रयोग किये जा सकते हैं।

(ब) **मृदा फास्फेट अवशोषक जैव उर्वरक:** पौधों की जड़ और मृदा में पायी जाने वाली फंजाई के आपसी सहसंबंध को माइकोराइजा कहते हैं। कुछ फंजाई पौधों की जड़ों के अन्दर सहसम्बंध स्थापित करके रहते हैं उनको वैसीकूलर अर्वसकुलर माइकोराइजा कहते हैं। पौधों की जड़ों के अन्दर पायी जानें वाली फंजाई फास्फोरस के अवशोषण में सहायक होती है। दलहनी फसलों के पोषण में इस फंजाई का राइजोबियम के साथ अनुकुल प्रभाव पड़ता है। इनकी उपस्थिति से जड़ ग्रन्थियों की संख्या और नत्रजन स्थिरीकरण में वृद्धि होती हैं। ये फंजाई लाभप्रद पादप वृद्धि हारमोन भी पैदा करते हैं। फंजाई पौधों से कार्बोहाइड्रेट ग्रहण करते हैं तथा पौधों को पोषक तत्व एवं हारमोन्स उपलब्ध कराते हैं, तथा पौधों को जड़ों द्वारा होने वाली बीमारीयों से बचाते हैं। ये फंजाई दो प्रकार के होते हैं -

(1) **बाह्य कवक माइकोराइजा**- बाह्य कवक माइकोराइजा फंजाई पौधों की जड़ो के बाहर होती हैं। अर्थात पौधों की जड़ के उपरी बाह्य भाग पर हाइफी (जाल) की एक घनी परत बनाती हैं। इस प्रकार की फंजाई को एक्टोमाइकोराइजा भी कहते हैं। यह विषेषकर जंगली वृक्षों की प्रजतियों की जड़ों में पायी जाती हैं।

(2) **अन्तः कवक माइकोराइजा**- आन्तरिक माइकोराइजा जड़ों के अन्दर (वैसीकूलर एवं अर्बसकूलर) गाठें बनाती हैं। यह क्रिया बिना किसी परिवर्तन के सम्पन्न होती हैं, इसलिए इस प्रकार की फंजाई को बेसीकुलर अरवसकुलर माइकोराइजा कहतें हैं। दलहनी फसलों के लिए यह फंजाई प्रयोग में लाई जाती हैं। दलहनी पौधों का सूक्ष्म जीवाणुओं से सहजीवी सम्बन्ध दो प्रकार से होता हैं- पहला जीवाणुओं द्वारा जिसमें वायु मण्डलीय नत्रजन का जैविक स्थिरीकरण होता हैं, जबकि दूसरा फंजाई के साथ, जिसमें वैसीकुलर अर्बसकुलर माइकोराइजा और राइजोबियम कल्चर को एक साथ प्रयोग करने पर सोयाबीन की फसल की पैदावार में 10-15 प्रतिशत की वृद्धि पायी गयी हैं। यह माइकोराइजा जड़ तंत्र के बाहरी का भाग का विस्तार करता हैं, जिसमें कवक सूत्र अधिक भाग में फैलकर और गहराई में जाकर पोषक तत्वों (फास्फोरस, नत्रजन, पोटेशियम, सल्फर एवं जिंक) को मृदा से अवशोषित करके उसका संचय कवक सूत्रों के मेंटल में करते हैं। माइकोराइजा के कवक सूत्र मृदा में अधिक गहरायी तक फैल जाते हैं और शुष्क परिस्थितियों में पौधों के लिए जल की आपूर्ति करते हैं। यह फंजाई नाशक पदार्थों का स्राव भी करते हैं जो नाइथीयम, राइजोक्टोनिया एवं फ्यूजेरियम फंजाई के लिए हानिकारक होते हैं। यह कई वृद्धि कारक पदार्थों जैसे साइटोकाइनिन, जिबरेलिन और विटामिन का स्राव करते हैं तथा फसल अवशेषों के सैल्यूलोज को सड़ाने तथा लिगनिन का अपघटन करने में काफी महत्वपूर्ण पाये गये हैं।

जैव उर्वरकों की उपयोग विधि

(1) **बीज उपचार:** 200 ग्राम जैव उर्वरक का 200-500 मि.ली. पानी में घोल बनाकर 10-12 किग्रा. बीज में भली भांति मिलायें जिससे इसकी परत सभी बीजों पर एक समान चढ़ जाये, तत्पश्चात् इसे छाया में सुखाकर बुवाई करें।

(2) **पौधे, जड़ या कन्द का उपचार:** 1-2 कि.ग्रा. जैव उर्वरक को 10-12 ली. पानी में घोलकर 10 क्विंटल कन्द का उपचार किया जा सकता हैं। इस घोल में कन्द या पौधों को 10-15 मिनट तक डुबोकर रखें, तत्पश्चात इनकी रोपाई या बुवाई करें।

(3) **मृदा उपचार:** 2-3 कि.ग्रा. जैव उर्वरक का 10 कि.ग्रा. कम्पोस्ट तथा भुरभुरी मांटी में मिश्रण तैयार करके एक एकड़ खेत में आखिरी जुताई के समय या फसल में पहली सिंचाई से पूर्व छिड़काव करें। 5-10 कि.ग्रा. जैव उर्वरक एक हेक्टर भूमि के लिए पर्याप्त होता हैं। 10 कि.ग्रा. नीलहरित शैवाल प्रति एकड़ धान के लिए पर्याप्त होती हैं तथा 10 क्विंटल अजोला प्रति एकड़ धान की फसल में प्रयोग करना चाहिए।

4. कैंचुआ खाद उत्पादन एवं प्रयोग

मृदा स्वास्थ्य में गिरावट के चार प्रमुख कारण हैं: 1. मृदा अपरदन 2. पोषक तत्वों की ऋणात्मक वापसी 3. मृदा में कार्बनिक खादों का कम उपयोग एवं जीवांश की कमी 4. लवणीकरण एवं क्षारीयकरण तथा 5. कृषि की वर्तमान त्रुटिपूर्ण प्रणाली। मृदा स्वास्थ्य एवं उर्वरता को समगतिशील बनाये रखने के लिए इसका पोषण आवश्यक है जो कि मृदा में जीवांश खादों के उपयोग से ही संभव है। हमारे देश में पशुधन से प्राप्त गोबर के साथ-साथ फसलीय अवशेष, वानिकी अवशेष गाँव-देहात में घरों की साफ सफाई का कूड़ा करकट एवं विभिन्न कृषि उद्योगों के जैविक अवशेष भारी मात्रा में निकलते हैं जिनको वर्मीकम्पोस्टिंग के माध्यम से जैविक खादों के रूप में बदलकर खेतों में मांटी के पोषण के लिए प्रयोग करके मृदा स्वास्थ्य एवं उपज को टिकाऊ बनाया जा सकता है। इस कार्य हेतु कैंचुआ खाद उत्पादन ग्रामीण उद्योग की एक महत्वपूर्ण एवं क्रान्तिकारी प्रौद्योगिकी के रूप में उभर कर आया है। इस प्रौद्योगिकी को ग्रामीण उद्योग के रूप में अपनाकर केंचुआ खाद उत्पाद एवं उपयोग की प्रमुख बातें यहाँ पर दी गयी हैं।

उपयुक्त प्रजाति का चयन: सही प्रजाति के कैंचुओं की उपलब्धता कैंचुआ खाद उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण पक्ष हैं। व्यावहारिक उपयोगिता की दृष्टि एवं वातावरणीय घटकों (जैसे नमी की मात्रा, तापमान एवं पोषक स्रोत) के आधार पर केंचुओं को तीन श्रेणियों में बांटा गया हैं।

1. एपीजीइक 2. एण्डोजीइक 3. एनेसिक

एपीजीइक श्रेणी के कैंचुए सामान्यतया भूमि के ऊपर पाये जाते हैं। ये कूड़े-करकट के ढेर अथवा भूमि की सतह पर सड़ते हुए जैविक पदार्थों की सतह तक ही सीमित रहते हैं तथा कम्पोस्ट वर्म के नाम से जाने जाते हैं। ये अपनी पोषण आवश्यकता विविध प्रकार के सड़ते हुए जैविक पदार्थों का भक्षण करके पूर्ण करते है। इसलिए इनको ह्यमस निर्माणकारी भी कहते हैं। एण्डोजीइक एवं एनेसिक श्रेणी के कैंचुए भूमि में रहने वाले होते हैं। एण्डोजीइक कैंचुए भूमि की खनिज युक्त परतों में रहते हैं तथा वानस्पतिक पदार्थों की अपेक्षा मिट्टी का भक्षण ज्यादा करते हैं, जबकि एनेसिक श्रेणी के कैंचुए जटिल एवं गहरी सुरंग बनाकर रहते हैं तथा भोजन के रूप में पत्तियों को खाने के लिए सतह पर आते हैं उन्हें खाने से पूर्व बिल में घसीट कर ले जाते हैं। ये रात्रि में ज्यादा क्रियाशील रहते हैं तथा अपने बिलों की दीवारों को मलोत्सर्ग से मजबूत करके भूमि में स्थिर सुरंगें बनाते हैं।

सभी सतही (एपीजीइक) कैंचुओं को हर प्रकार के जैविक अपशिष्ट एवं हर परिस्थिति में खाद बनाने के उपयोग में नहीं लाया सकता है। इस श्रेणी के कैंचुओं की निम्नलिखित प्रमुख प्रजातियाँ ही काम में लायी जाती है:

1. *आइसीनिया फोइटिडा* : इन्हें यूरोपियन कम्पोस्ट वर्म, ब्राडलिंग वर्म अथवा टाइगर वर्म कहते है।
2. *यूड्रीलस यूजिनी* : इन्हें अफ्रीकन नाइट क्रॉलर कहते हैं।
3. *पेरियोनिक्स एक्सावेट्स* : इन्हें ओरियंटल कम्पोस्ट वर्म कहते हैं।
4. *लुम्ब्रीकस रूबीलस* : इन्हें रेड वर्म कहते हैं।

आइसीनिया फोइटिडा एवं *लुम्ब्रीकस रूबीलस* प्रजातियां कम ताप सहन करती हैं अतः ठण्डे स्थानों के लिए उपयुक्त हैं जबकि *यूड्रीलस यूजिनी* अधिक ताप सहन करती है। शहरी क्षेत्रों के जैविक अपशिष्टों की कम्पोस्टिंग के लिए *आइसीनिया फोइटिडा* एवं पेरियोनिक्स प्रजाति के कैंचुओं को प्रयोग किया जाता है। उत्तरी भारत में अधिकतर *आइसीनिया फोइटिडा* से ही कैंचुआ खाद बनायी जाती है।

2. ढ़ाँचे का निर्माण

ढाँचे का आकार पशुओं की संख्या एवं उपलब्ध जैविक अवशेषों की मात्रा पर निर्भर करता है। सामान्यतया एक पशु हाने पर 25×20×8 फीट की लम्बाई, चैड़ाई एवं ऊँचाई का मूंज (सरकण्डे) से छप्पर बनाया जाता है। हवा का बहाव एवं धूप रोकने के लिए छप्पर के तीन तरफ टाटी लगा दी जाती है तथा इस छप्पर में 10×2×1.5 फीट के आकार की सतह पर 2-2 फीट की दूरी पर वर्मी बैड्स (हौदी) बनाते हैं।

3. कैंचुआ खाद बनाने की क्रमवार विधि

1. बैड्स की सतह में 10 से.मी. मोटी दोमट माटी की तह लगाकर इसके ऊपर 5 किलो गोबर पानी में घोलकर छिड़काव कर लेते हैं।
2. विभिन्न जैविक अवशेषों को गोबर के साथ (70:30 के अनुपात में) मिलाकर बेड्स में भरने से पहले पानी छिड़कर तर कर लिया जाता है ताकि उस मिश्रण की गर्मी निकल जाये। यह प्रक्रिया भराई से पहले 2-3 दिन के अन्तराल पर कम से कम दो बार की जाती है अन्यथा वर्मी बैड्स में भरे हुए जैविक कचरे में गर्मी पैदा होने पर केंचुए मर जाते हैं।

3. तैयार जैविक अवशेषों के मिश्रण को बैड्स में भर दिया जाता हैं तथा भरी हुई प्रत्येक बैड में 5 किलो केंचुआ (जिनकी संख्या लगभग 5000 होती है) एक पतली नाली बनाकर उसमें छोड़ दिये जाते हैं। तत्पश्चात् 300 ग्राम एजोटोबैक्टर एवं 300 ग्राम फॉस्फोरस विलायक सूक्ष्म जीवों के पाउडर को 40 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव कर दिया जाता हैं।
4. बैड्स में केंचुआ छोड़ने के बाद उनको टाट-बोरी या घास फूंस से ढक दिया जाता है और हजारे से हल्का सा पानी का छिड़काव भी करते हैं।
5. प्रत्येक 10-12 दिन के अन्तराल पर वर्मी बैड्स में भरे जैविक मिश्रण की धीरे-धीरे पांच फार वाले फावड़े से पलटाई की जाती है जिससे कि उसमें वायु का संचार पर्याप्त रहे तथा अपघटन (खाद निर्माण) की प्रक्रिया तेजी से चलती रहे। प्रत्येक पलटाई के पश्चात पानी छिड़काव आवश्यक होता है ताकि उसमें 30-35 प्रतिशत नमी बनी रहे।

4. तैयार खाद को एकत्रित करना

केंचुआ खाद बनकर तैयार हुई अथवा नहीं इस बात का पता इससे चलता है कि यदि सभी केंचुए बैड्स के धरातल में चले गये हैं तो समझो कि खाद बनकर तैयार हो गयी है। सामान्यतया केंचुआ खाद बनने में 50 से 60 दिन का समय लगता है तथा इस प्रक्रिया से अत्यधिक पोषक तत्वों वाली गंध रहित भुरभुरी खाद बनकर तैयार होती है जिसमें नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, कैल्शियम, मैग्नीशियम, जिंक एवं कोबाल्ट आदि पोषक तत्व सामान्य जैविक खाद की तुलना में कई गुना बढ़ जाते हैं। इस तरह तैयार खाद को हल्के हाथ से बटोर कर एकत्रित कर लेते हैं। यदि आवश्यकता हो तो मोटे छलने से चालकर भी खाद को एकत्रित किया जाता है तथा केंचुओं को बैड के एक कोने में एकत्रित कर दिया जाता है। तत्पश्चात बैड में गोबर एवं जैविक अवशेषों की पुनः भराई करके केंचुओं को छोड़ दिया जाता है।

तालिका 13: केंचुआ खाद में विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा

क्र.स.	पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)
1.	जैविक कार्बन	80-90
2.	कुल नत्रजन	2.0-2.8
3.	उपलब्ध फास्फोरस	1.2-2.5
4.	उपलब्ध पोटेशियम	0.15-1.0
5.	उपलब्ध सोडियम	0.06-0.30
6.	कैल्शियम एवं मैग्नीशियम	22.67 से 70.0 मिलीतुल्य/100 ग्राम
7.	कॉपर	2.0-9.5
8.	लोहा (आयरन)	2.0-9.3
9.	जिंक	5.7-11.4
10.	उपलब्ध सल्फर	129.0-550.0

मात्रा पी.पी.एम में

6. केंचुआ खाद उपयोग से मृदा में लाभ

केंचुआ खाद मृदा स्वास्थ्य एवं फसल उत्पादन को टिकाऊ बनाये रखने में किस तरह से उपयोगी एवं लाभकारी है इसका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार हैः

1. **भूमि की भौतिक गुणवत्ता में सुधार:** केंचुए अपनी प्रजाति के अनुसार भूमि की ऊपरी सतह पर सड़े-गले कूड़े करकट की तह से लेकर भूमि की विभिन्न सतहों तक में रहते हैं। एण्डोजीइक तथा एनेसिक श्रेणी के केंचुए मिट्टी में बिल बनाकर रहते हैं जिनकी गहराई लगभग 25-30 से.मी. तक होती है। एण्डोजीइक भूमि के ऊपरी सतह में धरातल के समतलीय (सामानान्तर) बिल बनाते हैं जबकि ऐनेसिक श्रेणी वाले गहरी खड़ी सुरगे बनाते हैं। इस प्रक्रिया में ये भूमि को जोतकर प्राकृतिक हलवाहे का काम करते हैं और लगभग 1-5 मि.मी. माटी की सतह को प्रतिवर्ष नीचे से ऊपर कर देते हैं। इस प्रक्रिया से मिट्टी में सरंधता बढ़ती है। इसे भूमिगत जल स्तर एवं जल निकासी में भी वृद्धि होती है तथा मृदा में ताप संचरण व सूक्ष्म जलवायु की एकरूपता के लिए अनुकूलता पैदा होती है।
2. **भूमि की उर्वरता एवं रासायनिक गुणवत्ता में सुधार:** सामान्यतया पौधों को अपनी वृद्धि एवं जीवन चक्र पूरा करने के लिए 17 पोषक तत्व आवश्यक होते हैं। इन पोषक तत्वों का मूल स्रोत मृदा में पाया जाने वाला जीवांश (जैविक) पदार्थ होता है जिसमें सभी पोषक तत्व जटिल रासायनिक यौगिकों के रूप में रहते हैं तथा इसके विघटन एवं खनिजीकरण से पोषक तत्वों का रूपान्तरण होता है। यह कार्य मृदा में उपस्थित विभिन्न सूक्ष्म जीवों (जैसे बैक्टीरिया, फंजाई एवं एक्टिनोमाइसिटीज) के समूह द्वारा होता है। भूमि की सतह पर सड़े गले कूड़े करकट में रहने वाले एपीजीइक श्रेणी के कैचुए (जैसे *आइसीनिया फोइटिडा*) अपने द्वारा स्रावित पदार्थो से सूक्ष्म जीवो की विघटन एवं खनिजीकरण प्रक्रिया

को उत्तेजित करते हैं जिससे जीवांश में उपस्थित पोषक तत्वों के रूपान्तरण की प्रक्रिया में वृद्धि होती है। कैंचुओं द्वारा खाये गये जैविक अवशेषों का कार्बन: नत्रजन अनुपात घट जाता है तथा जटिल रूप से बँधे तत्व रूपान्तरित होकर आसानी से पौधों को उपलब्ध हो जाते हैं।

3. **भूमि की जैविक गुणवत्ता में सुधार:** भूमि की उर्वरता बनाये रखने तथा पौधों को पोषक तत्व उपलब्ध कराने में मृदा में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवों (जैसे जीवाणु, एक्टिनोमाइसिटीज एवं फंजाई) का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इनकी संख्या, विविधता एवं सक्रियता ही मृदा की जैविक गुणवत्ता का सूचक होती है। इनके अभाव में अथवा निष्क्रिय रहने पर रासायनिक उर्वरकों के रूप में डाले गये पोषक तत्व भी पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। मृदा में अत्यधिक उर्वरक डालने के बावजूद फसल उत्पादन में बढ़ोत्तरी न होने का प्रमुख कारण मृदा में जीवांश एवं सूक्ष्म जीवों की संख्या, विविधता एवं सक्रियता में कमी है जिसकी वजह से उर्वरकों के रूप में डाले गये पोषक तत्वों का रूपान्तरण नहीं हो पाता है तथा अधिकतर पोषक तत्व अनुपलब्ध अवस्था में ही मृदा में पड़े रहते हैं तथा मृदा एवं भूमिगत जल की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं।

7. पर्यावरण सरंक्षण में कैंचुओं का योगदान

ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों से प्रतिदिन काफी मात्रा में कूड़ा करकट निकलता है जिसमें रसोई घर, पूजास्थलों एवं कृषि आधारित विभिन्न उद्योगों के जैविक अवशेष आते है। इन जैविक अपघटन शील पदार्थो को कैंचुआ खाद उत्पादन विधि द्वारा जैविक खाद में परिवर्तित करके सरलता से प्रकृति में पुनः चक्रित किया जा सकता हैं तथा इस कार्य से पर्यावरण सरंक्षण की दिशा में एक साथ कई समस्याओं का समाधान होगा जैसे-

1. प्रदूषण का फैलाव कम होगा।
2. शहरी एवं ग्रामीण जैविक कचरे का निपटारा कम व्यय के साथ होगा।

खेतों में डालने के लिए एक अच्छा जैविक खाद उपलब्ध होगा जिससे मृदा स्वास्थ्य टिकाऊ बनेगा।

8. ग्रामीण उद्योग के रूप में केंचुआ खाद उत्पादन की संभावनाएँ

अपने देश में कैंचुआ खाद उत्पादन को एक कुटीर उद्योग के रूप में अपनाया जा सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक ओर अपने देश में जैविक कूड़े कचरे के एकत्रित होने से वातावरणीय प्रदूषण की समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं वहीं दूसरी तरफ पौधों के पोषक तत्वों, मृदा-उर्वरता एवं उत्पादकता में सुधार हेतु अच्छी गुणवत्ता वाले जैविक खादों में कमी से फसल उत्पादन भी प्रभावित हो रहा है। हमारे देश में श्रम संसाधन पर्याप्त है जिनका पूर्ण क्षमता एवं दक्षता के साथ उपयोग नहीं हो पाता है। ठोस जैविक अपशिष्टों का उपयोग केचुआ खाद बनाने के लिए किया जाना चाहिए। इससे कृषि क्षेत्र में रोजगार के नये अवसरों का सृजन होगा तथा कृषि में उत्पादन बढ़ेगा। अतः वर्मी कम्पोस्टिंग को पूरे देश में कुटीर उद्योग के रूप में विकसित करने की अपार संभावनाएँ हैं।

5. फसल अवशेष प्रबंधन एवं मृदा स्वास्थ्य

धान एवं गेहूँ फसल की कम्बाइन हार्वेस्टर से कटाई के बाद फसल अवशेषों को आग जलाकर नष्ट कर देने से पर्यावरण प्रदूषण की समस्या तथा भूमि की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है। इसके समाधान के लिये कृषि वैज्ञानिकों ने विभिन्न कृषि मशीनें तैयार की हैं जिनसे फसल अवशेषों को खेत में ही मिला दिया जाता है या खड़े खेत में फसल अवशेषों में ही बुवाई की जा सकती है।

हैप्पी सीडर मशीन द्वारा गेहूं की बुवाई करने से धान फसल अवशेष प्रबंधन

कृषि वैज्ञानिकों ने हैप्पी सीडर मशीन धान की कम्बाइन हार्वेस्टर से कटाई के बाद खेत में खड़े धान फसल अवशेषों में सीधी बुवाई के लिये विकसित की है। इस मशीन से कम्बाईन द्वारा काटी गई धान फसल अवशेषों के बीच में बिना जुताई व बिना फसल अवशेष जलाए गेहूँ की बुवाई की जाती है। इस मशीन के दो भाग होते हैं। पहले भाग में कटर (फलेल ब्लेड) लगे होते हैं जो कि 1500 आर.पी.एम. पर घूमते हैं तथा ड्रिल से बुवाई करने वाले फालों के आगे आने वाले अवशेषों को काटकर पीछे की तरफ फैंकते हैं जिससे मशीन के फालों में धान के अवशेष नहीं फंसते हैं। दूसरे पिछले भाग में बीज ड्रिल लगी होती है जिसके द्वारा गेहूँ की बुवाई की जाती है। इस मशीन से एक घंटे में लगभग एक एकड़ की बुवाई की जा सकती है। इसको चलाने के लिये 50 हॉर्स पॉवर के ट्रैक्टर की आवश्यकता पड़ती है। हैप्पी सीडर से बुवाई करने के बाद यूरिया खाद का प्रयोग पहली व दूसरी सिंचाई करने से पहले करना चाहिए। इस प्रकार फसल अवशेष मृदा में शीघ्र विघटित होकर मृदा में पोषक तत्वों की वृद्धि करेंगें।

हैप्पी सीडर को उपयोग में लाने से पहले सावधानियाँ

हैप्पी सीडर मशीन से बिना जुताई गेहूँ की बुवाई

- धान फसल की रोपाई से पहले खेत समतल कर लेना चाहिए, क्योंकि धान की फसल कटने के पश्चात हैप्पी सीडर मशीन से खेत की बिना जुताई किए गेहूँ की बुवाई की जाती है। खेत के समतल न होने पर हैप्पी सीडर मशीन द्वारा ठीक तरह से बुवाई नहीं की जा सकती है।
- धान की फसल में आखिरी सिंचाई करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि धान की कटाई के बाद हैप्पी सीडर मशीन से गेहूँ की बुवाई करते समय खेत में उचित नमी होनी चाहिए।
- हैप्पी सीडर मशीन को बुवाई से पहले बीज व उर्वरकों की मात्रा को मशीन में लगे लीवर के द्वारा नियंत्रित कर लेना चाहिए।
- बीज को सही गहराई पर बुवाई करने के लिये गहराई नियंत्रक पहिए द्वारा 3.5 से 5.0 सें.मी. गहराई पर नियंत्रित कर लेना चाहिए।
- कम्बाइन द्वारा काटी गई धान की पराली को सुपर एस.एम.एस. (स्ट्रा मैनेजमेन्ट सिस्टम) या शर्ब मास्टर द्वारा खेत में समान रूप से बिखेर देना चाहिए। हैप्पी सीडर से बुवाई करने के लिए दो क्लच वाला ट्रैक्टर उपयोग में लाना चाहिए।

हैप्पी सीडर मशीन द्वारा बुवाई करने से लाभ

हैप्पी सीडर मशीन से बुवाई की गई गेहूँ की फसल

जीरो टिलेज सीड ड्रिल से बिना जुताई गेहूँ की बुवाई व फसल

- गेहूँ की बुवाई से पहले सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। धान फसल की आखिरी सिंचाई की नमी में ही गेहूँ की बुवाई की जाती है जिससे एक सिंचाई की बचत होती है।
- बुवाई से पहले खेत को जोतकर तैयार नहीं करना पड़ता है जिससे खेत की तैयारी में लगने वाला समय, डीजल, श्रम व धन की बचत होती है तथा गेहूँ की बुवाई समय से हो जाती है।
- इस मशीन से बुवाई करने पर फसलों के अवशेष मिट्टी में मिलने से मृदा की भौतिक व रासायनिक अवस्था में सुधार होता है तथा मृदा में जीवांश पदार्थ व पोषक तत्वों की वृद्धि हो जाती है।
- फसल अवशेषों के मृदा की सतह पर रहने से पानी का वाष्पीकरण कम होता है जिससे अधिक समय तक मृदा में नमी बनी रहती है तथा सिचाई की बचत होती है।
- फसल अवशेष मृदा की सतह पर होने के कारण तथा खेत की जुताई न होने से खरपतवारों के बीज मृदा की गहरी सतह में नीचे ही पड़े रहते हैं जिससे उनका अंकुरण नहीं हो पाता है तथा खरपतवारों का प्रकोप कम होता है।
- फसल अवशेष मृदा में गलकर मृदा के तापक्रम को नियंत्रित करने में सहायक होते हैं जिससे दिसम्बर-जनवरी में मृदा का तापमान गर्म तथा मार्च-अप्रैल में मृदा का तापमान ठंडा रहता है। जिससे दानों का विकास अच्छा होता है तथा पैदावार में वृद्धि होती है।
- फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से मृदा के जल ग्रहण करने की क्षमता में वृद्धि होती है।

» फसलों के अवशेष मृदा में मिलाने से मृदा में उपस्थित सूक्ष्म जीवों व मित्र कीटों की संख्या में वृद्धि होती है जिससे फसल उत्पादन अधिक होता है।

जीरो टिलेज सीड ड्रिल मशीन द्वारा गेहूँ की बुवाई करने से फसल अवशेष प्रबंधन

धान फसल की मजदूरों द्वारा हाथ से कटाई करने के बाद खेत की बिना जुताई गेहूँ की बुवाई करने के लिये कृषि वैज्ञानिकों ने जीरो टिलेज सीड ड्रिल मशीन विकसित की है। यह मशीन गेहूँ की बुवाई के लिये अत्यन्त उपयोगी, लाभकारी व पर्यावरण के लिए हितकारी हैं। इस मशीन से एक घंटे में 2 से 2.5 एकड़ क्षेत्र में गेहूँ की बुवाई की जा सकती है।

मल्चर द्वारा धान फसल अवशेशों का खेत में प्रबंधन

जीरो टिलेज सीड ड्रिल द्वारा बुवाई करने से लाभ

» इस मशीन से गेहूँ की बुवाई करने पर धान फसल के अवशेषों में आग नहीं लगानी पड़ती है जिससे पर्यावरण प्रदूषित नहीं होता है तथा भूमि की उर्वरा शक्ति में भी वृद्धि होती है।

» बुवाई से पहले खेत की तैयारी में लगने वाला समय, श्रम तथा लागत में लगभग 1200-1500 रूपये प्रति एकड़ की बचत होती है। गेहूँ की बुवाई 8-10 दिन पहले हो जाती है।

» इस तकनीक से बुवाई करने से खेतों में खरपतवारों का प्रकोप कम होता है क्योंकि खेत की जुताई न करने से खरपतवारों के बीज मृदा की गहरी सतह में ही पड़े रहते हैं जिससे उनका अंकुरण नहीं हो पाता है।

» इस विधि से बीज उचित गहराई व दूरी पर बोया जाता है तथा बीज की उचित मात्रा पड़ती है जिससे बीज का अंकुरण अच्छा होता है तथा परम्परागत विधि की तुलना में अंकुरण 2 से 3 दिन पहले हो जाता है।

स्ट्रा कटर-कम-स्प्रेडर या शर्ब मास्टर द्वारा फसल अवशेष प्रबन्धन

इस मशीन को हैप्पी सीडर द्वारा बुवाई से पहले धान फसल के अवशेषों को काटकर खेत में समान रूप से फैलाने के काम में लाया जाता है जिससे गेहूँ की बुवाई एक समान हो सके।

मल्चर मशीन द्वारा फसल अवशेष प्रबन्धन

यह मशीन धान फसल के अवशेषों को काट कर टुकड़े करती है तथा अवशेषों को समान रूप से फैलाकर प्रैस करती है। इसके पश्चात हैप्पी सीडर से बुवाई करने में आसानी होती है। इस मशीन के उपयोग से फसल अवशेष मिट्टी में मिलकर मृदा को पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं तथा मृदा की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाते है। इस मशीन से भूमि की सतह पर फसल अवशेषों की सतह बन जाने से खरपतवारों का प्रकोप कम होता है तथा मृदा की जलधारण क्षमता व पोषक तत्वों में वृद्धि होती है।

रिवर्सिवल मोल्ड बोर्ड प्लो द्वारा फसल अवशेष प्रबन्धन

रिवर्सिवल मोल्ड बोर्ड प्लो द्वारा कटे हुए धान फसल अवशेषों को मृदा में 15 से 30 सें.मी. गहराई तक अच्छी तरह मिलाया जाता है। जिससे फसल अवशेष मृदा में सड़कर मृदा के जीवांश पदार्थ व पोषक तत्वों में वृद्धि करते हैं तथा मृदा की जलधारण क्षमता बढ़ाते है इस प्रकार फसल अवशेष जलाने से पर्यावरण को होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है। इस मशीन को चलाने के लिये 50 हॉर्स पॉवर से अधिक का ट्रैक्टर उपयोग में लाना चाहिए।

पूसा डीकंपोजर के द्वारा खेत के अंदर फसल अवशेष का विघटन

इस तकनीक द्वारा खेतो के अंदर ही फसल अवशेष का तीव्र गति से विघटन किया जा सकता है और गड्ढा, ढेर विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार किया जाता है। 10 लिटर प्रति एकड़ तरल डीकम्पोजर का का उपयोग किया जाता है ये तरल नैपसैक स्प्रेयर की मदद से स्प्रे अर्थात छिड़काव किया जाता है और फिर रोटावेटर का उपयोग करके अवशेष को खेत में पलट दिया जाता है । धान के अवशेष को खेत में पलटने के 15 दिन बाद सरसों एवं गेहूँ के बीज आसानी से बोए जा सकते है और पूसा डीकंपोजर का अंकुरण पर भी कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है और धान के पुआल को 25 दिनों के भीतर विघटन हो जाता है।

फसल अवशेषों के विघटन हेतु पूसा डीकंपोजर का खेत में छिड़काव